

श्रीमद्भागवत स्कन्ध 8 अध्याय 8: लक्ष्मी का प्राकट्य

14 September 2026



मथे हुए क्षीरसागर से देवी लक्ष्मी उठती हैं, बिजली-सी देदीप्यमान, हाथों में कमलों की माला लिए। हर देवता, ऋषि और दिव्य प्राणी के पास से होकर वे वह माला केवल भगवान विष्णु के गले में डालती हैं — और लक्ष्मी अपना शाश्वत धाम उनके वक्षःस्थल पर पा लेती हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवत विज्जम में आपका पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिमयी यात्रा। भयंकर विष के शान्त होने पर क्षीरसागर का मन्थन इस आठवें स्कन्ध के आठवें अध्याय में पुनः आरम्भ होता है — और यहाँ देवी लक्ष्मी अपने शाश्वत भगवान को चुनने हेतु प्रकट होती हैं।

अध्याय की जानकारी

- ग्रन्थ: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 8 (आठवाँ स्कन्ध)
- अध्याय: 8 (अष्टम अध्याय)

- अध्याय शीर्षक: लक्ष्मी का प्राकट्य और भगवान का मोहिनी रूप
- मुख्य वक्ता: श्रीशुकदेव गोस्वामी, राजा परीक्षित से कहते हुए
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: क्षीरसागर का तट
- केन्द्रीय विषय: मथे सागर से रत्न उठते हैं; देवी लक्ष्मी प्रकट होकर भगवान विष्णु को चुनती हैं; अमृत उठता है और असुरों में कलह होती है; भगवान अपना मोहक रूप धारण करते हैं
- प्रमुख श्लोक श्रेणी: स्कन्ध 8, अध्याय 8, श्लोक 1-46
- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

सप्तम अध्याय में क्षीरसागर का मन्थन आरम्भ हुआ, और भगवान ने समस्त उद्यम को दिव्य कच्छप रूप में मन्दराचल धारण करके सम्भाला। परन्तु पहला जो उठा वह जगत-नाशक हलाहल विष था, जिसे भगवान शिव ने करुणावश पी लिया, और सदा के लिए करुणा का नीला कण्ठ पाया। विष के शान्त होने पर यह अध्याय मन्थन को पुनः उठाता है — और अब सागर अपने चिर-प्रतीक्षित रत्न देता है।

मथे सागर से रत्न उठते हैं

श्रीशुकदेव राजा परीक्षित से कहते हैं कि विष के समाप्त होते ही देवता और असुर नई आशा से भरकर पुनः मन्थन-रज्जु थाम लेते हैं।

श्रीशुक उवाच

पीते गरे वृषाङ्गेण प्रीतास्तेऽमरदानवाः ।

ममन्थुस्तरसा सिन्धुं हविर्धानी ततोऽभवत् ॥ १ ॥

श्रीशुक उवाच पीते गरे वृषाङ्गेण प्रीतास्तेऽमरदानवाः ममन्थुस्तरसा सिन्धुं हविर्धानी ततोऽभवत्

अर्थ: श्रीशुक ने कहा — जब वृषभचिह्न वाले भगवान शिव ने विष पी लिया, तब देवता और असुर, आनन्द से भरकर, बल से सागर मथने लगे; और उस मन्थन से कामधेनु सुरभि प्रकट हुई। (स्कन्ध 8, अध्याय 8, श्लोक 1)

वेदज्ञ ऋषियों ने यज्ञ हेतु आवश्यक पवित्र सामग्री के लिए सुरभि को ग्रहण किया। फिर उच्चैःश्रवा नामक चन्द्र-सा श्वेत अश्व उठा, जिसे बलि ने चाहा और पाया; फिर चार दिव्य दाँतों वाला चन्द्र-श्वेत गजराज ऐरावत; फिर कौस्तुभ मणि, जिसे श्रीहरि ने अपने वक्षःस्थल के आभूषण रूप में लिया; फिर कल्पवृक्ष पारिजात, जो हर कामना पूर्ण करता है; और फिर अप्सराएँ, स्वर्ण से अलंकृत और उत्तम वस्त्रों में, जो अपनी मनोहर गति से देवताओं को आनन्दित करती हैं।



मन्थन पुनः आरम्भ होता है और क्षीरसागर अपने रत्न एक के बाद एक प्रदान करता है — कामधेनु सुरभि, उच्चैःश्रवा अश्व, ऐरावत हाथी, कौस्तुभ मणि, और कल्पवृक्ष पारिजात (श्लोक 1-7)।

मन्थन पुनः आरम्भ होता है और क्षीरसागर एक के बाद एक अपने रत्न देता है — कामधेनु सुरभि, अश्व उच्चैःश्रवा, गजराज ऐरावत, कौस्तुभ मणि, और कल्पवृक्ष पारिजात (श्लोक 1-7)।

देवी लक्ष्मी का प्राकट्य

फिर, सबसे देदीप्यमान, देवी रमा — लक्ष्मी — प्रकट हुई, जो समृद्धि की साक्षात् मूर्ति और भगवान के प्रति पूर्ण समर्पित हैं, स्फटिक-पर्वत पर चमकती बिजली की भाँति अपनी प्रभा से समस्त दिशाओं को आलोकित करती हुई।

ततश्चाविरभूत् साक्षाच्छ्री रमा भगवत्परा ।

रञ्जयन्ती दिशः कान्त्या विद्युत् सौदामनी यथा ॥ ८ ॥

ततश्चाविरभूत् साक्षाच्छ्री रमा भगवत्परा रञ्जयन्ती दिशः कान्त्या विद्युत् सौदामनी यथा

अर्थ: फिर भगवान के प्रति पूर्ण समर्पित लक्ष्मीदेवी रमा प्रकट हुई, जो बिजली की एक रेखा के समान अपनी प्रभा से समस्त दिशाओं को आलोकित कर रही थीं। (स्कन्ध 8, अध्याय 8, श्लोक 8)

वहाँ उपस्थित सब — देवता, असुर और मनुष्य समान रूप से — उनके लिए लालायित हो उठे, उनके सौन्दर्य, कुलीनता, यौवन और लावण्य की महिमा से जिनके मन अभिभूत हो गए। महेन्द्र एक अद्भुत सिंहासन लाए; पवित्र नदियाँ अपने साकार रूप में स्वर्ण-कलशों में पवित्र जल लाईं; धरती माता ने ओषधियाँ दीं, गौओं ने अपने पाँच पवित्र पदार्थ, और वसन्त ने पुष्प-फल दिए। ऋषियों ने शास्त्रोक्त विधि से उनका अभिषेक किया, गन्धर्वों ने गान किया और उनकी पत्नियों ने नृत्य किया। चारों दिशाओं के गजराजों ने कमल-धारिणी देवी को स्वर्ण-कलशों से स्तोत्रगान के बीच स्नान कराया। सागर ने उन्हें पीत रेशमी वस्त्र दिए; वरुण ने भ्रमरों से गुंजायमान वैजयन्ती माला दी; विश्वकर्मा ने अद्भुत आभूषण, सरस्वती ने मुक्ताहार, ब्रह्मा ने कमल, और नागों ने कर्णाभूषण-युगल भेंट किए।



देवी लक्ष्मी समुद्र से देदीप्यमान प्रकट होती हैं, और समस्त देवगण उनका सम्मान करते हैं — नदियाँ स्वर्ण-कलशों में पवित्र जल लाती हैं, दिग्गज उन्हें स्नान कराते हैं, और प्रत्येक देवता उपहार अर्पित करता है, जबकि वे अपना कमल धारण किए रहती हैं (श्लोक 8-16)।

देवी लक्ष्मी सागर से देदीप्यमान उठती हैं, और समस्त दिव्य प्राणी उनका सम्मान करते हैं — नदियाँ स्वर्ण-कलशों में पवित्र जल लाती हैं, दिग्गज उन्हें स्नान कराते हैं, और हर देवता उपहार अर्पित करता है जब वे कमल धारण किए हुए हैं (श्लोक 8-16)।

लक्ष्मी भगवान को चुनती हैं

अपनी कमल-माला लिए देवी उस महती सभा में एक पति की खोज में चलीं — जो हर दोष से रहित, नित्य, और अक्षय गुणों से युक्त हो। गन्धर्वों, यक्षों, असुरों, सिद्धों, चारणों और देवताओं में देखते हुए उन्होंने प्रत्येक में कोई न कोई दोष पाया: जिसमें तपस्या थी उसमें क्रोध पर पूर्ण संयम न था; जिसमें ज्ञान था उसमें भी आसक्ति शेष थी; जो महान था उसमें कामना से मुक्ति न थी; कोई अपने बल के लिए किसी और पर आश्रित था। किसी में धर्म था पर प्राणियों के प्रति प्रेम न था; किसी में उदारता थी जो मुक्ति की ओर न ले जाती थी; किसी में पराक्रम था जिसे काल फिर भी नष्ट कर सकता था। किसी में दीर्घ आयु थी पर सौम्यता न थी; किसी में सौम्यता पर अनिश्चित आयु; और वह विरला जिसमें दोनों थे, आचरण में अशुभ था। किसी को पूर्ण न पाकर अन्ततः उन्होंने उस एकमात्र भगवान को चुना जिनमें हर गुण निर्दोष रूप से वास करता है।

एवं विमृश्याव्यभिचारिसद्गुणै-

वरं निजैकाश्रयतयागुणाश्रयम् ।

वव्रे वरं सर्वगुणैरपेक्षितं

रमा मुकुन्दं निरपेक्षमीप्सितम् ॥ २३ ॥

एवं विमृश्याव्यभिचारिसद्गुणैर्वरं निजैकाश्रयतयागुणाश्रयम् वव्रे वरं सर्वगुणैरपेक्षितं रमा मुकुन्दं निरपेक्षमीप्सितम्

अर्थ: इस प्रकार विचार करके देवी रमा ने भगवान मुकुन्द को अपना पति चुना, जिनके शुभ गुण कभी क्षीण नहीं होते, जो समस्त गुणों के आश्रय हैं, जिन्हें हर उत्कृष्टता चाहती है यद्यपि वे स्वयं कुछ नहीं चाहते। (स्कन्ध 8, अध्याय 8, श्लोक 23)

नए कमलों की माला उनके कन्धों पर रखकर और उनके वक्षःस्थल — अपने शाश्वत धाम — को प्राप्त करके वे उनके पार्श्व में खड़ी हो गई। भगवान विष्णु ने अपने वक्षःस्थल को त्रिलोक-जननी देवी का स्थायी निवास बनाया; और वहाँ स्थित होकर लक्ष्मी ने अपनी कृपादृष्टि से समस्त सृष्टि को कल्याण दिया। तब श्री की दृष्टि पाकर देवता और प्रजापति हर सद्गुण में समृद्ध हुए और परम सुख को प्राप्त हुए — जबकि लक्ष्मी की उपेक्षा पाकर दैत्य और दानव हतोत्साह, लोभी और निर्लज्ज हो गए।



प्रत्येक देवता और दिव्य प्राणी को छोड़कर, देवी लक्ष्मी अपनी कमल-माला एकमात्र भगवान विष्णु के गले में डालती हैं और उनके वक्षःस्थल पर अपना शाश्वत निवास ग्रहण करती हैं (श्लोक 23-25)।

हर देवता और दिव्य प्राणी के पास से होकर देवी लक्ष्मी अपनी कमल-माला केवल भगवान विष्णु के गले में डालती हैं और अपना शाश्वत धाम उनके वक्षःस्थल पर पा लेती हैं (श्लोक 23-25)।

अमृत उठता है और कलह छिड़ती है

मन्थन चलता रहा, और कमल-नयनी कन्या के रूप में वारुणी, मदिरा की अधिष्ठात्री देवी, प्रकट हुई, जिन्हें भगवान की मौन अनुमति से असुरों ने ले लिया। फिर, अन्ततः, एक अत्यन्त अद्भुत पुरुष उठा — श्याम-वर्ण और युवा, बलिष्ठ भुजाओं, शंख-सी ग्रीवा और रक्तिम नेत्रों वाला, माला पहने और हाथों में वह अमृत-कलश लिए जिसके लिए सबने श्रम किया था। अमृत देखते ही असुरों ने तुरन्त कलश छीन लिया, और उनमें घोर कलह छिड़ गई। “मैं पहले! मैं पहले — तुम नहीं!” वे चिल्लाते हुए एक-दूसरे से छीनने लगे, जबकि दुर्बल असुरों ने कहा कि समान श्रम के शाश्वत नियम से देवता भी भाग के अधिकारी हैं। मैत्री त्याग दी गई, और उनके मन अमृत की तृष्णा से ग्रस्त हो गए।

भगवान अपना मोहक रूप धारण करते हैं

उसी क्षण, समस्त उपायों को जानने वाले भगवान विष्णु ने एक अत्यन्त अद्भुत और अवर्णनीय रूप धारण किया — असीम सौन्दर्य की एक अनुपम कन्या।

एतस्मिन्नन्तरे विष्णुः सर्वोपायविदीश्वरः ।

योषिद्रूपमनिर्देश्यं दधार परमाद्भुतम् ॥ ४१ ॥

एतस्मिन्नन्तरे विष्णुः सर्वोपायविदीश्वरः योषिद्रूपमनिर्देश्यं दधार परमाद्भुतम्

अर्थ: उसी क्षण समस्त उपायों को जानने वाले परमेश्वर भगवान विष्णु ने एक अवर्णनीय और अत्यन्त अद्भुत स्त्री-रूप धारण किया। (स्कन्ध 8, अध्याय 8, श्लोक 41)

नीलकमल-सा श्याम और हर अंग में सुन्दर वह मोहक रूप अपनी सौम्य मुस्कान और मनोहर गति से दैत्य-सेनापतियों के हृदयों में आकर्षण जगा उठा। उसके सौन्दर्य में लीन कलहरत असुर अपना विवाद भूल गए — और मंच उस दृश्य के लिए तैयार हो गया, जैसा अगला अध्याय बताएगा, जिसमें भगवान इस मोहिनी रूप में अमृत उन देवताओं को देंगे जिन्होंने इसे अपनी भक्ति से अर्जित किया था।



जब असुर अमृत-कलश पर कलह करते हैं, भगवान विष्णु एक अद्भुत मोहक रूप धारण करते हैं जिससे उनका ध्यान पवित्र अमृत से हट जाए (श्लोक 41-46)।

जब असुर अमृत-कलश के लिए कलह करते हैं, भगवान विष्णु एक अद्भुत मोहक रूप धारण करते हैं जिससे उनका ध्यान पवित्र अमृत से हट जाए (श्लोक 41-46)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. सच्ची समृद्धि निर्दोष भगवान को ही खोजती है, क्योंकि उन्हें किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं। लक्ष्मी समस्त सभा को परखती हैं और हर प्रत्याशी में कोई न कोई दोष पाती हैं: तपस्वी अब भी क्रोध से जूझता है, ज्ञानी अब भी आसक्ति से बँधा है, बलवान अब भी काम के वश में है, धर्मात्मा में करुणा की कमी है, उदार व्यक्ति मुक्ति तक नहीं पहुँचता, और दीर्घजीवी भी दोषरहित नहीं। उसे मिला हर गुण अधूरा है, किसी न

किसी अभाव के सहारे टिका हुआ। केवल भगवान को अपने बाहर किसी सहारे की आवश्यकता नहीं — हर उत्कृष्टता स्वाभाविक रूप से उन्हीं की है, किसी दोष के विरुद्ध सन्तुलित नहीं। इसीलिए शास्त्र उन्हें ही परम नियन्ता कहते हैं — अनेकों में सबसे बड़े नहीं, अपितु वह जिनकी तुलना किसी से भी नहीं होती। समृद्धि, ठीक से समझें तो, उस भगवान से अभिन्न है जो उनसे कुछ नहीं चाहता (श्लोक 19-23)।

2. भक्ति, न कि हठ, कृपा को आकर्षित करती है। वहाँ सब लक्ष्मी को चाहते थे, फिर भी उन्होंने स्वयं को उसे दिया जो कुछ नहीं चाहता था। जिसे हम जकड़ते हैं वह हमसे भागता है; जिसे हम भगवान को अर्पित करते हैं वह पूर्ण होता है (श्लोक 9, 23)।

3. जो भेंट हम लाते हैं वह हमारे हृदय को प्रकट करती है। हर देवता और दिव्य प्राणी ने देवी का सम्मान उपयुक्त उपहार से किया। विनम्र भेंट में व्यक्त श्रद्धा स्वयं आराधना का एक रूप है (श्लोक 10-16)।

4. कृपा उन्नत करती है, और उसका हटना दरिद्र बनाता है। लक्ष्मी की दृष्टि पाकर देवता गुणों में समृद्ध हुए; उपेक्षित होकर असुर लोभी और निर्लज्ज हो गए। दिव्य से निकटता उन्नत करती है; उसकी विस्मृति पतित करती है (श्लोक 28-29)।

5. स्वार्थमय हठ कलह उत्पन्न करता है। अमृत के प्रकट होते ही असुर कलह में पड़ गए, प्रत्येक “मैं पहले!” चिल्लाता हुआ। साझे वरदान का लोभ भाइयों को प्रतिद्वन्द्वी बना देता है (श्लोक 38-40)।

एक भक्तिमय चिन्तन

इस अध्याय का सबसे सुन्दर क्षण एक चयन है। देवी लक्ष्मी — स्वयं समृद्धि, वह पुरस्कार जिसे उस विशाल सभा का हर प्राणी पाना चाहता था — न सबसे बलशाली द्वारा हथियाई जातीं, न सबसे चतुर द्वारा जीती जातीं। वे भीड़ में स्वतन्त्र चलती हैं, प्रत्येक को तौलती हैं, और स्वयं को केवल उस भगवान को देती हैं जो उनसे कुछ नहीं चाहता। यहाँ इस विषय में एक शान्त शिक्षा है कि वरदान वास्तव में हम तक कैसे आता है। हम जीवन भर जकड़ते रहते हैं — धन के लिए, सुरक्षा के लिए, उस सौभाग्य के लिए जिसे लक्ष्मी दर्शाती हैं — और जितना अधिक हम जकड़ते हैं, उतना अधिक वह फिसलता है। असुर हमें उस मार्ग का अन्त दिखाते हैं: वे अमृत छीनते हैं और तुरन्त झगड़ने लगते हैं, और अपने लोभ में उसे पूर्णतः खो देंगे। परन्तु भगवान, जो कुछ नहीं चाहते, स्वयं समृद्धि के शाश्वत धाम बन जाते हैं। भगवान को उन्हीं के लिए चाहना, न कि उनसे मिलने वाले फल के लिए, सब कुछ पाने का सबसे निश्चित मार्ग है। लक्ष्मी उसी हृदय पर विश्राम करती हैं जो उन्हें पाने का प्रयास नहीं कर रहा।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज एक ऐसी वस्तु पर ध्यान दें जिसके पीछे आप चिन्तित होकर भाग रहे हैं — कोई परिणाम, कोई मान्यता, कोई सुरक्षा जिसे खोने का भय है — और उसे सचेत रूप से भगवान के हाथों में सौंप दें, अपनी पकड़ ढीली करते हुए। ऐसा करते हुए धीरे से कहें: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” उस वस्तु के लिए नहीं, अपितु उस भगवान से निकटता के लिए प्रार्थना करें जिनमें समस्त कल्याण वास करता है, और उस देवी की भाँति विश्वास रखें जिसने कुछ न चाहते हुए भगवान को चुना, कि जो सचमुच आपका है वह एक शान्त हृदय में अपना धाम पा लेगा।

उपसंहार

इस आठवें अध्याय से हमारे साथ एक ही चित्र रह जाता है: स्वयं समृद्धि ने महानता के हर दावेदार को परखा और केवल उसी एक को सम्पूर्ण पाया जिसे किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं — और उसी को उन्होंने अपना शाश्वत धाम बना दिया। लक्ष्मी के इस चयन से हम सीखें कि भगवान को उनके दिए फल के लिए नहीं, अपितु उनके स्वरूप के लिए चाहें, और विश्वास रखें कि सच्चा धन केवल उसी हृदय का होता है जो अब पकड़ नहीं रखता। अमृत का क्या होगा, और भगवान का यह मोहक रूप देवताओं की आशा कैसे पूर्ण करेगा, यह श्रीमद्भागवत हमें आगे बताएगा।

श्रीमद्भागवत का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जाग्रत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), आठवाँ स्कन्ध, अष्टम अध्याय, पृष्ठ 767–771।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुरूप प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश-रूप में हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा भाष्य का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक से किसी सम्बद्धता अथवा उसके अनुमोदन का संकेत नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-8-chapter-8-the-appearance-of-lakshmi-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट